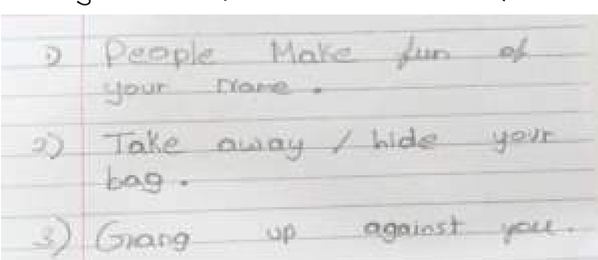
संस्कृति, जिसका महत्त्व है

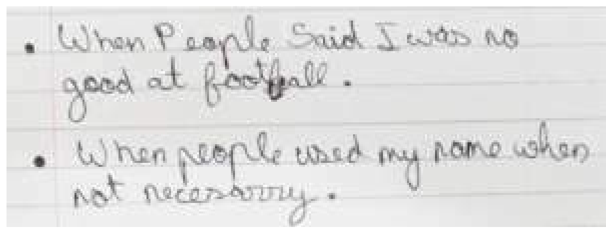
करपगम एस.

माध्यमिक स्कूल की कक्षा 5, 6 और 7 के कक्षा–अध्यापक के तौर पर मैंने बच्चों को कक्षा–सत्रों के दौरान, स्कूल के साझा स्थलों में बैठकर बस की प्रतीक्षा करते हुए, शिक्षकों के कमरे के आगे से जाते हुए, एक–दूसरे को डाँटते– फटकारते हुए सुना है। पहले–पहल तो मुझे लगा कि इस उम्र के बच्चे आत्माभिव्यक्ति करते हुए असहज महसूस करते हैं और अपने साथी विद्यार्थियों को नरमी से चिढ़ाना–तंग करना बस उनके साथ बात की शुरुआत करने का एक तरीका है। लेकिन एक शिक्षक के तौर पर मैं हमेशा कान खोलकर रखती थी – यह पता लगाने के लिए कि वे एक–दूसरे को सम्बोधित करने के लिए कैसी भाषा का प्रयोग करते हैं, क्या वे अपनी बातों में बहुत आक्रामक हैं, आदि–आदि। साथ ही मैं सतर्क रहती थी कि उनके द्वारा की गई एक–एक टिप्पणी या चिढ़ाने की अदा पर हस्तक्षेप न करूँ क्योंकि मुझे लगता था कि यह सब उनके बड़े होने की प्रक्रिया का ही एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है और उन्हें इससे होकर गुजरना चाहिए और अपने ही तरीके से इस सबका



सामना भी करना चाहिए।

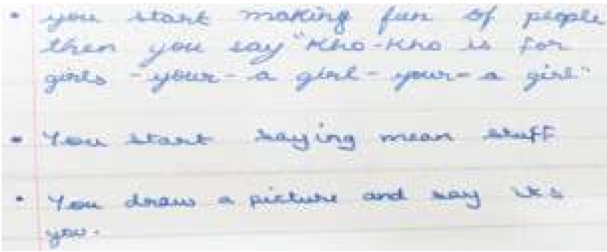
यह सब महसूस करते हुए मैंने अपने बच्चों को विभिन्न सत्रों में और अलग–अलग तरह से यह संकेत भी दिया था कि जब भी वे किसी प्रकार की छेड़छाड़ से निपटने में असमर्थ महसूस करें तो आवश्यकता पड़ने पर मैं उनके लिए उपलब्ध रहूँगी। शिक्षक होने के नाते हमने तय किया कि उन कुछ बच्चों के साथ अलग से बात करेंगे जो हमारी निगाह में इस मदद के हकदार थे ताकि वे हमारे पास आकर विश्वास के साथ अपनी बात रख सकें। यह इतनी सावधानी के साथ और चुपचाप किया गया था कि सम्पूर्ण कक्षा के सामने उनकी बात खुलकर आ जाने पर भी वे कमजोर महसूस नहीं करते थे। हमने उन बच्चों से भी बात की जो स्वाभाविक तौर पर कुछ हद तक हावी प्रवृत्ति के थे और हमारी इन बातों और चेतावनियों को हल्के में लेते थे।



एक बार जब मैं अपनी कक्षा में घुसने को थी, मैंने दो बच्चों के बीच की बातचीत का एक टुकड़ा सुना, "मारे गए, आज हमें हल्के व्यंजन के तौर पर उपमा मिल रहा है।" मैं कक्षा में आते हुए बोली, "तुम्हें उपमा अच्छा नहीं लगता?" सब एक–दूसरे को देखने लगे और बोले, "ऐसा कुछ नहीं है ऑण्टी।" हमारे स्कूल में शिक्षिकाओं को इसी तरह सम्बोधित किया जाता था। मैंने सोचा कि इस बात पर वक्त क्यों बरबाद किया जाए और कक्षा को जारी रखा। लेकिन मैंने स्वयं से यह भी कहा कि खाने–पीने की आदतों पर बच्चों से बात होना चाहिए।

करीब एक महीना बाद भोजन–कक्ष के प्रबन्धक ने बैठक में शिक्षकों से शिकायत की कि बच्चे पाव–भाजी, भेलपूरी, मीठे बन, तले हुए भोजन जैसे व्यंजनों के लिए तो बहुत भीड़ करते हैं लेकिन भाप से पके भोजन तथा बड़ों द्वारा 'सेहत के लिए अच्छे' माने जाने वाले व्यंजनों के लिए नहीं आते।

एक दिन कक्षा में एक बच्चे ने मुझे बताया कि उसके पिता आज मुझे मिलने के लिए आ सकते हैं। यह बच्चा उसके एक सहपाठी के मुताबिक बहुत ही दयालु, नरम स्वभाव का, प्यार करने वाला बच्चा था। वास्तव में तो मैं उसके माता–पिता से

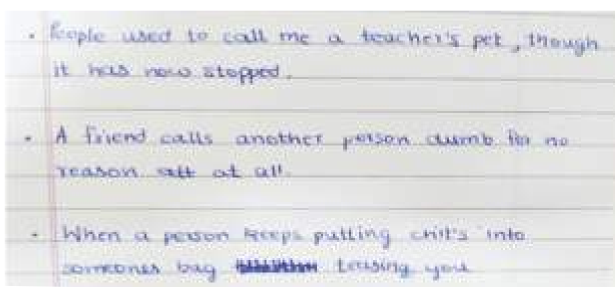


मिलने की सोच ही रही थी ताकि उन्हें उसके सहपाठियों की उसके बारे में इस राय बाबत बता सकूँ। भोजनावकाश के बाद उसके पिता आए और हम शिक्षक–कक्ष में मिले। अगले दो मिनट में जो कुछ उन्होंने हमसे साझा किया, वह इतना चौंकाने वाला था कि विश्वास करना भी कठिन था। उन्होंने कहा कि उनका बेटा बहुत हिंसक हो चला है। उसकी इच्छा की वस्तु उसे नहीं मिलती तो बहुत रूठता,मचलता,नखरे करता है। इससे पहले वह अपनी पसन्द की वस्तुओं का चुनाव तो करता था लेकिन अपने माता–पिता के सुझाव को तुरन्त मान लेता था। पहले तो माता–पिता को लगा कि वह बस अपनी बात मनवाना चाहता है। लेकिन कुछ ही महीनों में वह केवल महँगे ब्रॉड के कपड़े, पेन,पेंसिल,कॉपी, जूते और जुराब तथा खेल का सामान खरीदने की जिद करने लगा। बच्चे के पिता ने मुझसे पूछा कि क्या मैं उसके इस नए व्यवहार के बारे में उसके साथ अलग से बात करने को तैयार हूँ? मैंने उन्हें तो आश्वस्त किया कि मैं जो भी आवश्यक है, वह करूँगी, मगर मैं स्वयं इस बारे में आश्वस्त नहीं थी कि हो क्या रहा है।

इसी से मिलती–जुलती बात मेरे सहकर्मियों के ध्यान में उनकी कक्षा के विद्यार्थियों के माता–पिता द्वारा लाई गई। हमारा ध्यान भी इस ओर जाना शुरू हुआ कि बच्चे एक विशेष ब्रॉड के कपड़े पहनने लगे थे और एक विशेष खेल ही खेलते थे जो उन्हें लगता था कि बेहतर है। जब हमने भीतर खेले जाने वाले तथा कुछ अन्य खेल सुझाए तो उन्होंने यह कहकर उन्हें रद्द कर दिया कि ये तो 'शिशुओं के खेल' हैं। हमें लगा कि यह बड़े होने की प्रक्रिया और अपने वरिष्ठ साथियों का अनुकरण करने का मसला है।

हमने बात को यहीं छोड़ दिया लेकिन जब कुछ और माता–पिता ने भी यह बात उठाई, तो हमें लगा कि शायद कुछ है जिसे हम समझ नहीं पा रहे। हमने अपने–अपने अनुभव शिक्षक–बैठक में साझा किए और चर्चा के बाद कोई न कोई हल तलाशने का निर्णय लिया। एक मौका तब मिला जब एक अभिभावक ने हमें उसके बच्चे से ऊपर बयान में आई घटना से मिलती–जुलती घटना के सन्दर्भ में बात करने का आग्रह किया। यह आग्रह क्योंकि अभिभावक की ओर से आया था, मैंने बच्चे को बुलाया और शुरुआत में उसके नए जूतों के बारे में बात की। पूछा कि क्या उसे इन्हें पहनकर खेलने में आनन्द आ रहा है? उसने कहा कि उसे अभी तक खेलने का मौका ही नहीं मिला है और अगर वह शिक्षक को इस बारे में कुछ बताता है तो उसका बहिष्कार कर दिया जाएगा। फिर यह बात निकलकर आई कि सब बच्चे एक–दूसरे की नकल कर रहे थे – इस्तेमाल की वस्तुओं और भोजन, दोनों के सन्दर्भ में। एक बहुत ही महीन किस्म की दबंगई शुरू हो गई थी। इसके अन्य परिणाम भी निकल सकते थे – यह व्यापक स्तर पर स्वीकार की गई बात है कि इस तरह की दादागिरी के सबके लिए दुष्प्रभाव होते हैं और अगर उनके व्यवहार पर अंकुश नहीं लगाया जाता तो दादागिरी करने वाले बच्चे स्कूल से निकलने के बाद समाज–विरोधी तरीके से बर्ताव कर सकते हैं (रिग्बी, 2003)। इसलिए हमने बच्चों द्वारा अपने समकक्षों तथा अन्य लोगों के साथ व्यवहार में हस्तक्षेप न करने की अपनी बात पर पुनर्विचार किया। हमने तय किया कि बच्चों को इस मुद्दे की गम्भीरता का एहसास दिलाने के लिए हस्तक्षेप और मार्गदर्शन आवश्यक है।

हमने सुबह की सभा में यह मुद्दा उठाया। दबंगई पर बात रखी गई। आवश्यक था कि धीमी गति से चला जाए लेकिन यह भी, कि बच्चों को मुद्दे की गम्भीरता के बारे में जानकारी हो। मुद्दे को खुले में लाने के लिए हमने सुबह की सभा का ही इस्तेमाल किया। इससे बच्चे भी अपना दृष्टिकोण रख पाए। उन्होंने अपने साथी विद्यार्थियों के प्रभाव के बारे में लिखा। अनुसंधान के नतीजों से पुष्टि होती है कि जब विद्यार्थियों को मूल्यों के बारे में खुले तौर पर चर्चा करने के मौके दिए जाते हैं तो विद्यार्थी–कल्याण बढ़ता है, दादागिरी घटती है तथा ज्ञानार्जन के लिए स्थितियाँ बेहतर होती हैं (लोवट, टूमी, क्लेमेंट, क्रॉट्टी एवं नील्सन, 2009)। हमने यह भी पाया कि दादागिरी करने वालों को उनके शिकार हुए विद्यार्थियों के मुकाबले अधिक मदद और सहायता की आवश्यकता थी। असल में तो पहले उन्हें दादागिरी का सामना करना पड़ा था और फिर वे भी अन्य विद्यार्थियों के साथ यही करने लगे थे। यह हल्के–फुल्के मजाक के रूप में शुरू होता था मगर एक



हद के बाद उन्हें समझ नहीं आता था कि कहाँ और कैसे रुका जाए। जब प्रभावित बच्चों ने देखा कि उनकी कोई डॉट–डपट नहीं होने वाली तो वे हमारे पास अपनी समस्याएँ लेकर आए थे।

एक सत्र में उन्हें मार्गदर्शन देने के बाद हमें लगा कि अब उनका सशक्तीकरण किया जा सकता है। एक शिक्षक–बैठक में हमने अपने अनुभव से सीखी बातों पर विचार किया और महसूस किया कि इस अनुभव ने हमें समृद्ध किया है। अकादमिक बातों के मुकाबले एक सहायक, सक्षम बनाने वाला वातावरण अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया। मस्तिष्क और भावनाओं से सम्बद्ध अनुसन्धान से पता चलता है कि जब विद्यार्थी मानसिक सुरक्षा अनुभव करते हैं तो सीखने के लिए भी एक बेहतर स्थिति में होते हैं (बर्नार्ड, 1996; गोल्मन, 2006)। दूसरों का खयाल रखने वाली, सहयोगी तथा विद्यार्थी–केन्द्रित कक्षा हो तो स्कूल में मानसिक–मनोवैज्ञानिक सुरक्षा तथा सामाजिक–भावनात्मक समझ के लिए आवश्यक सम्भाल वाला माहौल मिलता है (हार्ट, 1992; जॉनसन तथा जॉनसन, 2003; वाल्बर्ग, ज़िंस और वाइज़्बर्ग, 2004)। शारीरिक तथा मानसिक सुरक्षा के लिए जगह निकालना हमारा सबसे बड़ा काम था। कई तरह के संसाधन उपलब्ध होने के बावजूद हमें मालूम था कि बच्चे के लिए यह बहुत ही संवेदनशील विषय है। यह लेख हमारे अनुभवों की एक तस्वीर भर प्रस्तुत करता है। मैंने व्यक्तिगत तौर पर इस अनुभव से कुछ बहुत ही मूल्यवान बातें सीखीं :

1. निन्दा न करें: बच्चे के व्यवहार को समझने का प्रयास करें।
2. उसे बेहतर समझने के लिए बच्चे के माता–पिता, उसके समकक्षों और शिक्षकों से बात करें। इन बातों को कोरी गप्प के रूप में न लें बल्कि यह तो बच्चे के बारे में बहुमूल्य प्रासंगिक जानकारी है।
3. माता–पिता को अपने विश्वास में लें। उन्हें जानने का अधिकार है और उन्हें ही दायित्व भी लेना होगा। वे समाजीकरण की प्रक्रिया में तथा समकक्षों के दबाव और अन्य प्रभावों का प्रतिरोध करना सीखने की प्रक्रिया में सहायक हो सकते हैं।
4. दिन–प्रतिदिन एकत्र की गई सूचनाओं और जानकारियों की एक डायरी रखें। ये प्रविष्टियाँ वस्तुपरक सलाह और सुझाव पाने में मददगार होंगी। इसके चलते अधिक समर्थ होने में भी मदद मिलती है।

References

- Goleman, D. (2006). Social Intelligence: The New Science of Social Relationships. New York: Bantam books.
- Hart, S. (1992). Collaborative Classrooms. In T. Booth, W. Swann, M. Masterton & P. Potts. (Eds.) Learning for All: Curricula for Diversity in Education (pp. 9-22). London: Routledge.
- Johnson, D. W., & Johnson, R. T. (2003). Student Motivation in Co-operative Groups: Social Interdependence Theory. In R. M. Gillies and A. F. Ashman (Eds) Cooperative Learning: The Social and Intellectual Outcomes of Learning in Groups.
- Lovat, T., Toomey, R., Clement, N., Crotty, R., & Nielsen, T. (Eds.) (2009). Values Education, Quality Teaching and Service Learning: A Troika for Effective Teaching and Teacher Education. Terrigal, Australia: David Barlow Publishing.
- ARigby, K. (2003). Addressing Bullying in Schools: Theory and Practice, Trends and Issues. Australian Institute of Criminology, 1-6. [Viewed 21 Jun 2010] http://aic.gov.au/documents/D/A/2/%7BDA2B9086-7A46-4CBB-B065-86B05BD2EA6C%7Dtandi259.pdf
- Walberg, H.J., Zins, J.E. & Weissberg, R.P. (2004). Recommendations and Conclusions: Implications for Practice, Training, Research and Policy. In J.E. Zins, R.P. Weissberg, M.C. Wang & H.J. Walberg (Eds.), Building Academic Success on Social and Emotional Learning: What does the Research Say? (pp. 209-218). New York: Teachers College Press.
- Bullies and Victims in a Primary Classroom: Scaffolding a Collaborative Community of Practice Veronica Morcom and Wendy Cumming-Potvin, Murdoch University.

करपगम एस. इस लेख के लिखे जाने के समय अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की शैक्षिक नेतृत्व एवं प्रबन्धन टीम में कार्यरत थीं। उन्होंने 12 साल तक भारत के विभिन्न हिस्सों में के.एफ़.आइ. स्कूलों में विज्ञान, सामाजिक विज्ञान और पर्यावरण–शिक्षा के शिक्षक के तौर पर काम किया है। उन्होंने वर्तनी, पठन एवं लेखन की समझ के क्षेत्रों में कठिनाई का सामना करने वाले बच्चों के साथ विशेष शिक्षक के रूप में कार्य किया है। वे वैकल्पिक पाठ्यचर्या की योजना बनाने और उसे तैयार करने में शामिल रही हैं तथा ऐसे बच्चों के ज्ञानार्जन के वर्तमान स्तरों के लिए पूरक का काम करने वाली सामग्री तैयार करने में भी शामिल रही हैं। वे मनोविज्ञान तथा शिक्षा में स्नातकोत्तर डिग्रीधारक हैं। उन्होंने सीखने में कठिनाई वाले बच्चों को सम्भालने तथा उनके मार्गदर्शन और परामर्श से सम्बद्ध स्नातकोत्तर डिप्लोमा भी लिया है। उन्हें ऑरिगैमी तथा बच्चों के साथ समय बिताना पसन्द है। उनसे kapooh@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : रमणीक मोहन

